ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 **SHRINKHALA :** VOL-1 * ISSUE-10*JUNE-2014

पर्यावरण प्रबन्धन में कृषि की भूमिका (पिथौरागढ़ जनपद के सन्दर्भ में)

चन्द्रावती भट्ट
असिस्टेंन्ट प्रोफेसर
भूगोल विभाग
एल एस एम राजकीय
स्नातकोत्तर महाविद्यालय
पिथौरागढ़, उत्तराखण्ड

सारांश

पिथौरागढ़ भारत के उत्तरी पर्वतीय भाग में स्थित नवसृजित उत्तराखण्ड राज्य का अन्तर्राष्ट्रीय सीमाओं में स्थित सीमान्त जनपद है। हिमाच्छादित शिखरों के अलौकिक दृश्य, अनुपम छटाओं एवं प्राचीनतम धरोहरों से परिपूर्ण,धार्मिक व सांस्कृतिक परम्पराओं एवं शुद्ध पर्यावरण के लिए देश में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। पर्यावरण में आने वाले परिर्वतन जैसे–हिमालय का पिघलना, ग्लेशियरो का पीछे हटना, असामयिक वर्षा,प्राकृतिक आपदाएं, कृषि–जैव विविधता आदि सोचनीय है। पर्यावरण को सुरक्षित रखने के लिए पर्यावरण प्रबन्धन की अति आवश्यकता है। पर्यावरणीय प्रबन्धक का उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनो के सदुपयोग को बनाये रखना है। पर्वतीय कृषि की पर्यावरण प्रबन्धन में महत्वपूर्ण भूमिका है। यहाँ 68.70 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या कृषि कार्य पर निर्भर है। कृषि पर्वतीय क्षेत्रों का आर्थिक आधार है। पारिस्थितिकी के नियमों को ध्यान में रख कर कृषि से पर्यावरण को सुरक्षित रखा जा सकता है।

मुख्य शब्द : अन्तर्राष्ट्रीय, ग्लेशियरों, पारिस्थितिकी, विशिष्ट, प्राकृतिक आपदाएं

प्रस्तावना

पर्यावरण के अन्तर्गत उन सभी दशाओं, संगठन एवं प्रभावों को सम्मिलित किया जाता है जो किसी जीव अथवा प्रजाति के उद्भव विकास एवं मृत्यु को प्रभावित करते हैं। प्रकृति में जो भी तत्व चारों ओर परिलक्षित होते हैं। वायु, जल, मृदा, पेड़–पौधे, प्राणिजगत आदि पर्यावरण के अंग हैं। पर्यावरण वह पक्ष है जिसने पृथ्वी को जीव जगत का गौरव प्रदान किया है। पूरे ब्रह्ममाण्ड में केवल पृथ्वी पर ही पौधों व प्रजाति के विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियां उपलब्ध हैं। जिससे इसे वसुन्धरा कहा जाता है। मानव की समस्त क्रियाकलापों का सम्बन्ध पर्यावरण से है। पर्यावरण तन्त्र की सुरक्षा के लिए पर्वतीय कृषि की अहम भूमिका है। पिथौरागढ़ जनपद का विस्तार 29^0–$27^|$ उत्तरी अक्षांश से 30^0–$49^|$ उत्तरी अक्षांश एवं 79^0–$50^|$ पूर्वी देशान्तर से 81^0–$1^|$ पूर्वी देशान्तर तक फैला है। यहाँ का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 7218 वर्ग किमी0 है। कुल जनसंख्या वर्ष 2011 में 483439 है। कुल जनसंख्या का 85.6 प्रतिशत ग्रामीण एवं 14.40 प्रतिशत नगरीय है। देश का आर्थिक आधार कृषि है। यहाँ की कुल जनसंख्या की 68.70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि के बदलते स्वरूप जैसे कृषि के प्रति रूचि कम, कृषि योग्य भूमि का बंजर भूमि में परिवर्तन होना, प्राचीन बीजों का उन्मूलन, फसल प्रतिरूप में परिवर्तन, कृषि–जैव विविधता आदि है। कृषि का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव पर्यावरण एवं जैव जगत पर पड़ रहा है। मृदा एवं भूमि संसाधन को देखते हुए पर्यावरण एवं कृषि–जैव विविधता को सुरक्षित रखना है। प्राचीन समय से कृषि आर्थिक आधार एवं भोजन ही नहीं बल्कि पारिस्थितिकी तन्त्र के नियमों की सुरक्षा करता है।

पर्यावरणीय प्रबन्धन में कृषि का महत्व

पर्यावरण प्रबन्धन में मृदा/भूमि संसाधन का प्रयोग कर, कृषि के महत्व को समझना अति आवश्यक है। कृषि का प्रत्यक्ष एवं परोक्ष दृष्टि से महत्व है, जो आर्थिक आधार, भोजन, भरण–पोषण, वस्त्र ही नहीं, बल्कि पारिस्थितिकीय तन्त्र की सुरक्षा लिए अति आवश्यक है।

पर्यावरणीय प्रबन्धन में कृषि के महत्व को देखते हुए निम्न बातों पर प्रकाश डालना आवश्यक है

- पर्यावरण सुरक्षा – कृषि पर्यावरण की गुणवत्ता बनाये रखने के लिए आवश्यक है। कृषि–जैव विविधता एवं जैवविविधता के संरक्षण में कृषि का योगदान सराहनीय है। औषधि युक्त भोजन जीव–जगत, पशु एवं पक्षी को भोजन/आश्रय कृषि से प्राप्त होते हैं। कृषि–जैवविविधता की सुरक्षा, संरक्षण एवं पर्यावरण की सुरक्षा है।

- बंजर भूमि में वातावरण को प्रदूषित करने वाली प्रजातियों के अतिक्रमण से सुरक्षा, मिट्टी संसाधन का उपयोग न होने पर भूमि में स्वास्थ्य, फसलों एवं पर्यावरण को प्रदूषित करने वाली प्रजातियों का अतिक्रमण होता है। जिससे प्राचीन स्वास्थ्यप्रद एवं शुद्ध पर्यावरण देने वाली प्रजातियाँ विलुप्त हो रही है।
- **उत्पादन में वृद्धि –** कृषि कार्य से उत्पादन में वृद्धि होती है। मानव की प्राथमिक आवश्यकता की पूर्ति एवं आत्मनिर्भरता के लिए कृषि उत्पादों को बढ़ावा मिलता है। भौगोलिक परिस्थिति को देखते हुए व्यावसायिक फसलों के उत्पादन में वृद्वि की जा सकती है, जैसे–चाय,मिर्च आदि।
- **पौष्टिक आहार एवं औषधि युक्त खाद्यान्न फसलें**– प्राचीन फसलों की किस्में, दालें, तिलहन, खाद्यान्न आयुर्वेद के क्षेत्र में महत्वपूर्ण है। पर्वतीय क्षेत्रों की फसलों का देश में ही नहीं अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान है, जिनके प्रति स्थानीय व्यक्तियों की जानकारी का अभाव है, जैसे– महुवा, जौ, भट्ट (काला,भूरा) बाजरा,तिलहन,अलसी,सरसों आदि।
- **पर्वतीय क्षेत्रों का संकट –** भूमि कटान,मिट्टी क्षरण,बाढ़ एवम् भूस्खलन की सुरक्षा। भूमि कटान एवं मिट्टी क्षरण से यहाँ की हजारों हेक्टर भूमि बंजर होती जा रही है। मिट्टी क्षरण एवं कटान कृषि प्रधान क्षेत्र के लिए सबसे बड़ी आपदा हैं। जिसके उत्तरदायी कारण मानवीय व प्राकृतिक है।
- **प्राकृतिक सौन्दर्य–** वसुन्धरा कही जाने वाली इस धरती को सुशोभित करने के लिए विभिन्न तरह की फसलों का आवरण अति आवश्यक है, पर्वतीय भागों के पहाड़ी ढालों पर बोयी जाने वाली फसलें प्राकृतिक सौन्दर्य को बढ़ाती हैं। पर्यावरण को प्रदूषित होने से बचाती है। जैव विविधता एवं कृषि जैव विविधता के संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण है।
- **पशु संसाधन का प्रयोग**
  पर्वतीय क्षेत्रों में पशु संसाधन का महत्वपूर्ण स्थान है। पशु संसाधन कृषि का अभिन्न अंग है। पशुओं पर पर्वतीय क्षेत्रों की कृषि निर्भर है। खेत जोतने, यातायात, पशु उत्पादन जैसे दूध,मांस,आदि। गोबर की खाद से स्वास्थ्य प्रद फसलों का उत्पादन किया जाता है।
- **प्राचीन संस्कृति को विलुप्त होने से बचाव**
  कृषि से जुड़ी संस्कृति, मेले, त्योहार, वेषभूषा, संगीत, धार्मिक पर्व एवं आपसी प्रेम, भाई चारा, संयुक्त परिवार, सहयोग एवं सहभागिता की भावी पीढ़ी के लिए सुरक्षित करने के लिए महत्वपूर्ण है।
- प्राकृतिक,आर्थिक,सामाजिक एवम् सांस्कृतिक पर्यावरण को सशक्त एवं समृद्ध बनाने के लिए अति आवश्यक है।
- **अध्ययन का उद्देश्य**
  भूमि संसाधन का सदुपयोग करना तथा पारिस्थितिकी नियमों के अनुसार पर्यावरण की गुणवत्ता को बनाये रखना है। प्राकृतिक भूमि संसाधन का अनुकूलतम उपयोग करना क्षेत्र के विकास के लिए अति आवश्यक है।

1. **अध्ययन विधि**
   गाँवो का सर्वेक्षण कर प्राकृतिक व सामाजिक स्थिति को समझना एवं विभिन्न स्थानों में जाकर सत्यापन किया। वातावरण के पूर्व व बाद के दृश्य का अवलोकन किया।

- क्षेत्र की प्राप्त सूचनाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया।
- पुस्तकों एवम् साहित्यों का संकलन एवं आकलन किया।

परिणाम एवं व्याख्या

वर्तमान में देश में पर्यावरण प्रबन्धन पर्यावरण संरक्षण के लिए अति आवश्यक है। पर्यावरण में होने वाले परिवर्तन, कृषि जैव विविधता, जलवायु परिर्वतन ग्लोबल वार्मिंग आदि जो पर्यावरण को प्रभावित कर रहे है। इनको सरंक्षित एवं सरक्षण के लिए कृषि की अहम भूमिका है। कृषि भूमि बंजर भूमि में परिवर्तित होती जा रही है। उत्पादन घट रहा है। पर्यावरणीय समस्यायें प्रबल हो रही है। पिथौरागढ़ जनपद की 87.05 प्रतिशत जसंख्या गाँवों में निवास करती है इनका मुख्य व्यवसाय एवं आर्थिक आधार कृषि है। यहाँ की 68.70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि कार्य में लगी है, कृषि का बदलता स्वरूप, एवं मानसिकता के फलस्वरूप ही कृषि क्षेत्र में कमी एवं उत्पादन में भी कमी आ रही है। कुल कर्मकरो में कृषकों का प्रतिशत, वर्ष 1961 में 87.3, वर्ष 1971 में 83 प्रतिशत, वर्ष 1981 में 78.2 प्रतिशत, वर्ष 1991 में 71.38 प्रतिशत, वर्ष 2011 में 68.70 प्रतिशत हो गयी। (स्रोत– सेन्सस हैण्ड बुक 1961, सांख्यिकीय पत्रिका 1976 एवं 2009,पिथौरागढ़) आँकड़ो एवं सर्वेक्षण से यह स्पष्ट होता है। कि कृषकों का प्रतिशत वर्ष 1961 से 2001 तक क्रमशः घटता गया है। वर्ष 1961 में 87.3 प्रतिशत था और वर्ष 2011 में घटकर 68.7 प्रतिशत रह गया है। इसके पीछे कुछ उत्तरदायी कारक है जिससे कृषि को रोजगारोन्मुख दृष्टि से नहीं लिया गया है। बढ़ती जनसंख्या असामयिक वर्षा, कृषि योग्य भूमि कम, जीवन स्तर में वृद्धि, शिक्षा, स्वास्थ्य, जंगली जानवर, आपदाएं, पलायन एवम् स्थानान्तरण आदि से कृषि प्रभावित हुई है। कृषि के प्रति यहाँ के निवासियों की लगन धीरे–धीरे कम हो रही है। कृषि के स्वरूप जैसे प्राचीन पद्धति की खेती,बीजों , खादों के प्रयोग में परिवर्तन देखने को मिलता है, जिसका प्रभाव उत्पादन,स्वास्थ्य एवं पर्यावरण पर पड़ रहा है। वर्तमान में बोये जाने वाले बीज, जलवायु, मिट्टी के अनुसार अधिक समय तक प्रयोग में नहीं लाये जा सकते है। बैलों से जुताई की प्रथा पहाड़ी पट्टियों एवम् निचली घाटियों में धीरे–2 कम होती जा रही है। जिससे पशुधन की भूमिका भी प्रभावित हो रही है। पशुधन कम होने से गोबर की खाद में कमी एवं रासायनिक खादों के प्रयोग बढ़ रहे है, जिससे जैव विविधता को भी क्षति हो रही है। वर्ष 2001 से 2009 तक गोबर की खाद का प्रयोग कम हो रहा है। कृषि को सुनिश्चित ढंग से एवं रोजगारोन्मुख ढंग से नहीं लिया जा रहा है, जिससें पर्यावरण एवं जैव जगत प्रभाावित हो रहा है। पर्यावरण को सुरक्षित रखने के लिए कृषि को बढ़ावा देना, संरक्षण करना अति आवश्यक है। जिससे फसल उत्पादन ही नहीं बल्कि

पर्यावरण को भी प्रदूषण से बचाया जा सके और भविष्य में स्वस्थ एवं समृद्व राज्य का निर्माण हो सके।

सुझाव

पर्यावरणीय प्रबन्धन में कृषि की भूमिका को देखते हुए पर्वतीय भागों में कृषि विकास के लिए निम्न सुझाव दिये गये है।

- मृदा संसाधन का उपयोग कर खाद्यान्न, कृषि रोपण आदि को जीवीकोपार्जन के रूप में विकसित किया जाये। सहकारिता व किसानों की सेवा समिति सुदृढ़ किया जाये।
- जलवायु के अनुकूल स्थानीय बीजों के विलुप्त होने एवं संरक्षण पर विशेष ध्यान दिया जाये।
- संरक्षित खेती को प्रोत्साहित किया जाये जिससे अतिरिक्त समय में भी आजीविका बनी रहे।
- मृदा को क्षति पहुँचाने वाली झूमिंग कृषि पर रोक लगाया जाय जो पर्यावरण को क्षति पहुँचाती है।
- भौगोलिक परिस्थिति को देखते हुए फसलों का उत्पादन एवं रोपण कृषि किया जाये।
- पशुपालन कृषि का अभिन्न अंग है, पशुपालन को बढ़ावा दिया जाए।
- प्रदूषण रहित पर्यावरण को देखते हुए कृषि, कुटीर उद्योग को बढ़ावा दिया जाय। जिससे प्राचीन हस्त शिल्प विलुप्त न होने पाये।
- यातायात का विकास हो एवं विपणन केन्द्रों को विकसित किया जाय।
- जैविक खाद, गोबर खाद, का प्रयोग उत्पादन एवं प्रदूषण रहित उत्पादन के लिए किया जाये।
- जल संरक्षण/संवर्द्धन कर भौगोलिक परिस्थिति के अनुसार सिंचाई के लिए लघु योजनाऐं कार्यान्वित की जायें।
- पर्वतीय क्षेत्रों के सतत् विकास की प्रक्रिया पर्यावरणीय प्रबन्धन है।
- बढ़ती बजर भूमि,घटती कृषि भूमि, प्राचीन बीजों की किस्में एवं उत्पादन क्षेत्र के लिए सोचनीय है।
- कृषि के प्रति लगन एवं जागरूकता को लाना अति आवश्यक है। जिससे कृषकों को आर्थिक एवम् स्वास्थ्य लाभ प्राप्त हो सके।
- महिलायें पर्वतीय कृषि की आधार स्तम्भ है। महिला श्रम एवम् रोजगार को ध्यान में रखते हुए कृषि पर रूचि विकसित करनी अति आवश्यक है।
- कृषि भूमि पर अनियन्त्रित निर्माण कार्य में अकुंश लगाना आवश्यक है। वर्तमान समय में कृषि भूमि पर ही निर्माण कार्य किये जा रहे है। जिसका कृषि एवं उत्पादन पर प्रभाव पड़ रहा है।
- पर्वतीय कृषि को रोजगारोन्मुख कृषि की दृष्टि से विकसित करना अति आवश्यक है। जिससे संसाधनो की उपयोगिता एवं पर्यावरण की गुणवत्ता बनी रहे।

निष्कर्ष

पर्वतीय क्षेत्र मुख्य रूप से भौगोलिक, आर्थिक, सामाजिक, एवं सांस्कृतिक दृष्टि से अन्य क्षेत्रों से सर्वथा भिन्न हैं। अपनी विशिष्ट भौगोलिक परिस्थितियों के कारण हिमालयी पर्वतीय क्षेत्र में आजीविका के सीमित साधन है। यहाँ के निवासियों की मूल–भूत आवश्यकता पूर्ति हेतु प्राकृतिक संसाधनों भूमि,जल,वन पर निर्भर रहना पड़ता है। पर्वतीय कृषि यहाँ का मुख्य साधन है। बिखरी कृषि भूमि प्राकृतिक आपदायें, भूमि कटान, असामयिक वर्षा, बादलों का फटना, जंगली जानवर, तकनीकी व सिंचाई साधनों का अभाव कम उत्पादन के पश्चात भी कृषि पर्यावरण प्रबन्धन के लिए महत्व पूर्ण है। गोबर खाद से उत्पन्न स्वादिष्ट एवं पौष्टिक तत्व युक्त फसलें मोटे अनाज चाय, जिनका अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में महत्व एवं आयुर्वेद औषधियों के लिए प्रसिद्ध हैं। इसके साथ जीव जगत, पशु पक्षी की सुरक्षा एवं शुद्ध आहार देकर जैव–विविधता को सुरक्षित कर पर्यावरणीय प्रबन्धन में सराहनीय भूमिका है। कृषि के बदलते स्वरूप एवं पर्यावरणीय सुरक्षा के लिए कृषि के महत्व को समझना और जागरूकता लाना अति आवश्यक हैं मिट्टी संसाधन का पूर्ण रूप से उपयोग कर पर्यावरण की गुणवत्ता को बनाया जा सकता है। जिससे बंजर होती कृषि भूमि को पुनः संसाधन के रूप में प्रयोग किया जा सके और पर्वतीय क्षेत्र समृद्ध एवं खुशहाल बन सकें।

सन्दर्भ

1. अलका गौतम जलवायु एवं समुद्र विज्ञान, 2003–04,रस्तोगी पब्लिकेशन शिवाजी रोड मेरठ।
2. बलवीर सिंह नेगी पारिस्थिकी एवं पर्यावरण, भूगोल– 1993–94, 132– आर0जी0 कॉलेज रोड मेरठ।
3. चतुर्भज मामोरिया एम0एस0 सिसौदिया संसाधन एवं पर्यावरण 2007 साहित्य भवन आगरा।
4. जगदीश सिंह पर्यावरण एवं सविकास– 2003 ज्ञानोदय प्रकाशन 234 दाउदपुर गोरखपुर।
5. सविन्द्र सिह पर्यावरण भूगोल–2000, प्रयाग पुस्तक भवन 20–ए0 यूनिवर्सिटी रोड इलाहाबाद।
6. त्रिपाठी, केसरी नन्दन उत्तराखण्ड का संमग्र अध्ययन जुलाई–2013–14, बौद्धिक प्रकाशन 1643– नयागाँव अल्लापुर इलाहाबाद।
7. सांख्यिकीय पत्रिका जनपद पिथौरागढ़–2008–09
8. सेंन्सस हैण्ड बुक वर्ष 1961–1971 पिथौरागढ़– जनपद।